Online at: https://researchtrendsjournal.com ISSN No: 2584-282X

INTERNATIONAL JOURNAL OF TRENDS IN EMERGING RESEARCH AND DEVELOPMENT

INTERNATIONAL JOURNAL OF TRENDS IN EMERGING RESEARCH AND DEVELOPMENT

Volume 2; Issue 2; 2024; Page No. 118-123

Received: 16-12-2023
Accepted: 26-02-2024

महादेवी के काव्य में साहित्य एवं रहस्यवाद का स्वरूप

[1]Kusum and [2]Dr. Anupam Kumar

[1]Research Scholar, Department of Hindi, Maharaja Agrasen Himalayan Garhwal University, Uttarakhand, India
[2]Professor, Department of Hindi, Maharaja Agrasen Himalayan Garhwal University, Uttarakhand, India

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.12793979

Corresponding Author: Kusum

सारांश

महादेवी जी की रचनाओं में उन्होंने अपने जीवन को उकेरा है, अपनी भावनाओं को व्यक्त किया है और उन सब को अंकित किया है जिनको उनके प्रेम ने प्रकाशित किया। उनकी रचनायें नारी जीवन का एक प्रतिबिम्ब हैं। हर अवस्था से होते हुए उनकी रचनावली उस शिखर पर पहुँची है जहाँ पर नारी की चंचलता, नारी के प्रेम, नारी के वात्सल्य, नारी के बलिदान और नारी के एकाकीपन की हर गाथा मिलती है। समग्रतः छायावादी साहित्य में रहस्यवाद का जो स्वरूप विद्यमान है, वह आर्य संस्कृति की उपज ळें छायावादी कवियों के रहस्यवाद पर विभिन्न विचारधाराओं का प्रभाव दिखायी देता है। उन्होंने वैदिक साहित्य से अद्वैत की छाया ग्रहण की और लौकिक प्रेम का समन्वय करके उसे बोधगम्य बना दिया। उनकी रहस्यवादी भावना गूढ़ न होकर सरल तथा मुक्तिदात्री है। उन्होंने प्रतीयमान जगत् की अवास्तविकता का बोध कराकर मानव जीवन को ईश्वरोन्मुख तथा चरित्र प्रधान बनाया। वस्तुतः छायावाद के सम्बन्ध में जो विभिन्न धारणायें आरम्भ से प्रचलित हुई वे अत्यन्त उतावली में बना ली गयी थीं। इसी कारण कहीं से एकांगी हैं और कहीं पर अत्युक्तिपूर्ण। सच तो यह है कि छायावादी कविताओं में एक साथ तीन–तीन क्रान्तियां हुईं, जिससे यह काव्यधारा पहले बनकर आयी। पहली क्रान्ति विचार और भावना के क्षेत्र में हुई, दूसरी कला के क्षेत्र में और तीसरी साहित्य परम्परा में। यह परिवर्तन इतनी तेजी से हुआ कि लोग उसे समझ नहीं पाये। अन्धों के देश में आँधी के जैसे विविध परिभाषाएँ होती हैं। उसी प्रकार प्रारम्भ में हिन्दी आलोचना क्षेत्र में छायावादी कविता का स्वागत हुआ। आज बहुत समय बीत जाने पर लोगों के सम्यक रूप से छायावादी कविता और उसके महत्व को समझा तथा स्वीकार किया है।

मुख्य शब्दः महादेवी, काव्य एवं रहस्यवाद, छायावाद, भावना, मुक्तिदात्री

प्रस्तावना

महादेवी वर्मा के जीवन दर्शन

महादेवी वर्मा का जन्म 26 मार्च, 1907 को होली के दिन फर्रुखाबाद में हुआ था।2 होली इस धतरी का निजी उत्सव है, क्योंकि इस दिन धरती के रूप, रंग, रस तथा गंध सजीव हो उठते हैं। जन्म दिन की यह रंगमयता और सार्वजनीयता उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व में सन्निहित है। उनके पिता का नाम गोविन्द्र प्रसाद वर्मा और माता का नाम हेमरानी था। उनके पितामह बाबू बाँके बिहारी दुर्गा के उपासक थे। उनके जन्म को बाबू ने देवी दुर्गा का विशेष अनुग्रह समझा और उनको आदर प्रदर्शित करने के लिए नवजात शिशु का नाम महादेवी वर्मा रखा। अपने नाम पर उन्होंने स्वयं टिप्पणी की है– पर वैसे मैं नाम पर की विशालता मेरे लिए दुर्वाह है। वैसे ही लक्ष्मी की समृद्धि भक्ति के कपाल की कुंचित रेखाओं में नहीं बन सकी।3 उन्होंने अपना उपनाम नहीं रखा। यह बात उनके इस कथन से स्पष्ट हो जाता है।'' ''उपनाम रखने की प्रतिभा है तो मैं सबसे पहले उसका प्रयोग अपने ऊपर करती।

महादेवी अपने माता पिता की पहली संतान थी। उनकी मां आस्तिक स्वभाव की होने कारण घर का कार्य भार स्वयं सम्भालती थी। इस बीच महादेवी रो–रोकर कोलाहल मचा देती थी। जिसके कारण मां विवश होकर उन्हें अफिम खिलाकर अपने दिनचर्या में व्यस्त हो जाती थी। उनकी माँ पूजा–आरती के समय सूर, मीरा तथा तुलसी के पदों का गायन के साथ–साथ स्व–रचित गीत भी गाया करती थी जिसका गहरा प्रभाव महादेवी वर्मा पर पड़ा था। माता–पिता दोनों अपने अपने क्षेत्र में उन्हें दक्ष कर दिया। उन्होंने अपने संस्मरण में पिता का उल्लेख शायद एक–दो बार किया हैं व्यक्तिगत रूप से अपने सम्पर्क द्वारा उन्होंने बालिका के ऊपर कोई प्रभाव नहीं डाला पर निश्चय ही पिता ने घर का जो वातावरण बना दिया था, वह उनके असम्प्रदायिकता दार्शनिकता तथा कर्मनिष्ठता से लगता है कि माँ

से पायी हुई भावुकता का तथा पिता से पाये दार्शनिकता का उनके जीवन में सुन्दर समन्वय हुआ है। उनके पिता गोविन्द प्रसाद वर्मा एम0 ए0 एल0 एल0 बी0 थे। माता हेमरानी भी परम् बिदुषी थी। अपने माता–पिता से प्राप्त संस्कारों के बारे में उन्होंनें लिखा है– ''एक और साधन पूत अस्तिक और दार्शनिकता पिता ने अपने–अपने संस्कार देकर मेरे जीवन को जैसा विकास दिया उसमें भावुकता के कठोर धरातल पर साधना एक व्यापक दार्शनिकता पर अस्तिकता एक सक्रिय किन्तु वर्ग या साम्प्रदाय में न बंघने वाली चेतना पर ही स्थित हो सकती थी।

पढ़ाई लिखाई में पिताजी का निरीक्षण–परीक्षण और उत्साहवर्धन तथा गृह कार्य में माता जी की शिक्षा–दीक्षा ने मिलकर इन्हें एक नई दिशा दिया था। माता के सम्पर्क में अधिक रहने के कारण उनके संस्कारों का इनके ऊपर विशेष प्रभाव पड़ा। अनेक स्थलों पर माता की सहानुभूति, दया तथा करूणा का चित्र मिलता है। अतीत के चल चित्र में वे लिखती है– ''मां के कारण हमारा घर अच्छा खासा जू बना रहता था।'' बाबू जब लौटते तब प्रायः कभी कोई लगंड़ा भिखारी बाहर के दलान में बैठा भोजन करता रहता। कभी सूरदास पिछवाड़े के दरवाजे पर खंजड़ी बजाकर भजन सुनाता होगा, कभी पड़ोस का कोई दरिन्द्र बालक नया कुर्ता पहनकर अंग्रेजी में चौकड़ी मारते दिखाई देता और कभी कोई वृद्धि ब्राह्मण भंड़ार घर के दरवाजे पर सीधा गठियाते दिखाई पड़ता।

एक सम्पन्न परिवार में संवेदनशीलता का पाठ पढ़ने का क्रम कभी टूटता दीख पड़ता है। मां किसी के पात्रता–अपात्रता का मापदण्ड अपनी सहज संवदेना को ही मानती थी। रामा के बारे में उनकी मां के विचार महादेवी के शब्दों में ज्ञातव्य है– ''रामा की कुरूपता का आवरण भेदकर उनकी सहानुभूति ने जिस सरल ह्रदय को परख लिया, उसमें अक्षय सौन्दर्य न होगा, ऐसा संदेह उनके लिए असम्भव था।''7 कहा जा सकता है कि इसी कुरूपता के आवरण को भेदकर आंतरिक सौन्दर्य को परखने तथा उसे अपने ह्रदय की सहानुभूति दे डालने का क्रम महादेवी के जीवन में सदैव बना रहा। इसलिए पर्वत की ऊँची–नीची उबड़–खाबड़ भूति पर यन्त्रवत चलने वाले जोगिया तथा धनिया जैसे कुली जो अपने जीवन के अर्भिभाव से अपरिचित रहते है सहज ही उसकी सहानुभूति पा लेते है और वे बड़ी सरलता से उनके अन्तस्थल में बैठकर उनके जीवन के मर्म को समझ लेती है। गूगिया जैसे निर्वाक प्राणी की अत्यन्त वेदना को आभावकर उनकी सहानुभूति सक्रिय रूप से प्रकट करती है।

महादेवी वर्मा के जीवन दर्शन में समसामयिक परिस्थितियों एवं पारिवारिक परिवेश का विशेष महत्व है। छायावादी कवियों में चतुष्मयी कवयित्री है। छायावादी कवियों की श्रेणी में महादेवी का महत्वपूर्ण स्थान है। महादेवी वर्मा का जन्म 1907 ई0 को उत्तर प्रदेश के फर्रूखाबाद जिले में होली के दिन एक सम्पन्न परिवार में हुआ। उनकी माता का नाम श्रीमती हेमरानी तथा पिता का नाम गोविन्द प्रसाद वर्मा था जो एक पण्डित कवि थे। ये अपनी माता पिता की पहली संतान थी। भारतीय समाज में आज के पचास वर्ष पहले भी कन्या का जन्म सुखद नहीं माना जाता था। महादेवी वर्मा के जन्म पर परिवार में कोई खुशियां नहीं थी।

लेकिन बाबा इनके जन्म पर अधिक प्रसन्न थे। इनके जन्म में अपनी कुलदेवी का अनुग्रह माना और उनके प्रति आदर प्रकट करते हुए नवागता बालिका का नाम महादेवी रखा। इनकी शिक्षा का प्रारम्भ 1912 ई0 मिशन स्कूल इन्दौर मध्य प्रदेश में हुआ। यें प्रारम्भ से ही पढ़ने में कुशग्र बुद्धि की प्रतिभाशाली लड़की थी इन्होंने सात वर्ष की अवस्था में ही शिशु रचना प्रारम्भ कर दी। महादेवी वर्मा नौ वर्ष की अवस्था में उर्दू संगीत तथा चित्रकला का ज्ञान प्राप्त कर ली थी। ब्रज भाषा में पद समस्या पूर्ति के साथ खड़ी बोली में भी कविताएँ लिखने लगी थी।

''महादेवी वर्मा द्वारा समाज में नव चेतना और नव जागृति का अविर्भाव हुआ। इस युग में सहयोगी ब्रम्ह समाज, आर्य समाज, विवेकानन्द, गांधी एवं रविन्द्रनाथ टैगोर के सिद्धान्तों एवं आदर्शो की स्थापना से समाज का विकास हुआ है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज के द्वारा पुनः भारतीय नव जागरण को प्रेरित किया। स्त्री शिक्षा, अर्न्तजातीय विवाह, साक्षरता, ऊँच–नीच की भावनाएँ आर्य समाज से ही प्रारम्भ हुई है। इनका प्रभाव महादेवी की रचनाओं पर पड़ा।

आधुनिक हिन्दी साहित्य के इतिहास में 1937 से लेकर 1952 तक के कालावधि अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। इस अवधि में जहाँ एक ओर सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, साम्प्रदायिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र के अनेक आन्दोलन हुए,वही दूसरी ओर रचनात्मक तथा आलोचनात्मक साहित्य के क्षेत्र में भी विविध विचारधाराओं का आविर्भाव और विकास हुआ। इस अवधि के आरंभिक भाग में द्वितीय विश्वयुद्ध हुआ जिसके गंम्भीर परिणाम सामने आये तथा इसी अवधि में भारत वर्ष को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई और भारत विभाजन के फलस्वरूप उत्पन्न हुई परिस्थियाँ भी सामने आई। साहित्य के क्षेत्र में इन परिस्थितियों का प्रभाव प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में स्पष्ट लक्षित होता है। युद्ध और शांति के समय रचा गया यह साहित्य स्पष्ट रूप से पारस्परिक पार्थक्य लिए हुए होता है। उदाहरण के लिए यदि शांति का समय होता तो बड़े–बड़े महाकाव्य नाटक, उपन्यास, रिपोर्ताज, एंकाकी एवं स्फुट काव्य का सृजन होता इस कथन का आशय यह नहीं है कि इस अवधि में महान साहित्यिक ग्रंथ नहीं लिखे गए। यहाँ पर इसका आशय केवल इतना ही है कि इस युग में जो साहित्य के संक्षिप्त रूप थे वे ही जनता में प्रिय हो सके और उन्हीं को लैकिक स्तर पर स्वीकृति मिली परम्परागत रूप से प्रचलित संक्षिप्त साहित्यिक रूपो के साथ साथ इस युग में अनेक नयी विधाओं का भी विकास हुआ जिसमें रेडियों–रूपक, रिपोर्ताज, यात्रा संस्मरण, शब्द चित्रे एवं व्यंग्यचित्र आदि हैं। आधुनिक हिन्दी साहित्य में सन् 1938 तथा उसके आस–पास का काल नवीनता की व्यापकता की दृष्टि से विशेष महत्व रखता है। पंतजी का 'युगान्त' 1988 में प्रकाशित हुआ और यह कृति अपनी संज्ञा के ही अनुरूप एक युग की समाप्ति और दूसरे युग के आरंम्भ का संकेत बन गई। इसी समय हिन्दी साहित्य कल्पना और आदर्श के घेरे को तोड़कर वैयक्तिकता, यथार्थ, और प्रगति की प्रशस्त्र भूमि पर पदापर्ण करती है। 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना 1936 में हुई जिसका प्रथम अधिवेशन मुंशी प्रेमचन्द्र के सभापतित्व में हुआ। इसी समय अनेक नवीन पत्र पत्रिकाओं का जन्म हुआ जिनमें 'हंस' और 'जागरण' का विशेष महत्व है। प्रगतिशील (बाद में) प्रयोगशील लेखकों को इन पलों में बड़ा बल मिला। हिन्दी कविता में व्यक्तिवादी स्वर बच्चन, नरेन्द्र शर्मा 'आंचल' आदि की कविता के माध्यम से इसी समय प्रस्फुटित होता है कुछ आगे चलकर रामविलास शर्मा, केदारनाथ अग्रवाल नागार्जुन, सुमन, शील जैसे समर्थ कवियों की कृतियों में भी प्रगतिवाद की झलक मिलती है। प्रथम 'तार सप्तक' 1943 के रूप में अज्ञेय के नेतृत्व में प्रयोगवाद की अवधारणा करता है। गद्य के क्षेत्र में जैनेद्र, यशपाल, इलचन्द्र जोशी तथा अन्य अनेक समर्थ लेखक इसी समय उभरते है। आधुनिक हिन्दी काव्य की पृष्ठिभूमि की विवेचना निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत है।

महादेवी की काव्यगत विशेषताएँ

महादेवी वर्मा रहस्यवाद और छायावाद की कवयित्री थीं, अतः उनके काव्य में आत्मा–परमात्मा के मिलन विरह तथा प्रकृति के व्यापारों की छाया स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। वेदना और पीड़ा महादेवी जी की कविता के प्राण रहे। उनका समस्त काव्य वेदनामय है। उन्हें निराशावाद अथवा पीड़ावाद की कवयित्री कहा

गया है। वे स्वयं लिखती हैं, दुःख मेरे निकट जीवन का ऐसा काव्य है, जिसमें सारे संसार को एक सूत्र में बाँध रखने की क्षमता है। इनकी कविताओं में सीमा के बंधन में पड़ी असीम चेतना का क्रंदन है। यह वेदना लौकिक वेदना से भिन्न आध्यात्मिक जगत की है, जो उसी के लिए सहज संवेद्य हो सकती है, जिसने उस अनुभूति क्षेत्र में प्रवेश किया हो। वैसे महादेवी इस वेदना को उस दुःख की भी संज्ञा देती हैं, "जो सारे संसार को एक सूत्र में बाँधे रखने की क्षमता रखता है"(किंतु विश्व को एक सूत्र में बाँधने वाला दुःख सामान्यतया लौकिक दुःख ही होता है, जो भारतीय साहित्य की परंपरा में करुण रस का स्थायी भाव होता है। महादेवी ने इस दुःख को नहीं अपनाया है। वे कहती हैं, "मुझे दुःख के दोनों ही रूप प्रिय हैं। एक वह, जो मनुष्य के संवेदनशील हृदय को सारे संसार से एक अविच्छिन्न बंधनों में बाँध देता है और दूसरा वह, जो काल और सीमा के बंधन में पड़े हुए असीम चेतना का क्रंदन है" किंतु, उनके काव्य में पहले प्रकार का नहीं, दूसरे प्रकार का 'क्रंदन' ही अभिव्यक्त हुआ है। यह वेदना सामान्य लोक हृदय की वस्तु नहीं है। संभवतः इसीलिए रामचंद्र शुक्ल ने उसकी सच्चाई में ही संदेह व्यक्त करते हुए लिखा है, "इस वेदना को लेकर उन्होंने हृदय की ऐसी अनुभूतियाँ सामने रखीं, जो लोकोत्तर हैं। कहाँ तक वे वास्तविक अनुभूतियाँ हैं और कहाँ तक अनुभूतियों की रमणीय कल्पना, यह नहीं कहा जा सकता"। इसी आध्यात्मिक वेदना की दिशा में प्रारंभ से अंत तक महादेवी के काव्य की सूक्ष्म और विवृत्त भावानुभूतियों का विकास और प्रसार दिखाई पड़ता है। डॉ॰ हज़ारी प्रसाद द्विवेदी तो उनके काव्य की पीड़ा को मीरा की काव्य–पीड़ा से भी बढ़कर मानते हैं।

महादेवी का रहस्यवाद

छायावादी काव्य में एक आध्यात्मिक आवरण तथा छाया रही है। अतः रहस्यवाद छायावादी कविता के प्रवृत्ति विशेष के लिए प्रयुक्त किया गया। महादेवी जी के अनुसार 'रहस्य का अर्थ वहाँ से होता है जहाँ धर्म की इति है। रहस्य का उपासक हृदय में सामंजस्यमूलक परमतत्व की अनुभूति करता है और वह अनुभूति परदे के भीतर रखते हुए दीपक के समान अपने प्रशांत आभास से उसके व्यवहार को स्निग्धता देती हैं।' महादेवी जी की रुचि सांसारिक भोग की अपेक्षा आध्यात्मिकता की ओर अधिक दर्शित होती हैं। रहस्यानुभूति की पाँच अवस्थाएँ उनके काव्य में लक्षित होती हैं। जिज्ञासा, आस्था, अद्वैतभावना, प्रणयानुभूति विरहानुभूति। महादेवी जी में उस परमत्व को देखने की, जानने की निरंतर जिज्ञासा रही हैं। वह कौतूहल से पूछती हैं–

'कौन तुम मेरे हृदय में
कौन मेरी कसक में नित मधुरता भरता अलक्षित?'

उनकी अज्ञात प्रियतम के प्रति आस्था केवल बौद्धिक न होकर रागात्मक है–

'मूक प्रणय से सधुर व्यथा से स्वप्नलोक के से आह्वान
वे आए चुपचाप सुनाने तब मधुमय मुरली की तान।'

आत्मा और परमात्मा के अद्वैतत्व के लिए 'बीन और रागिनी' का प्रतीक उनकी अभिनव कल्पना एक सुंदर उदाहरण है। उनकी यह भावना कोरे दार्शनिक ज्ञान या तत्व चिंतन पर आधारित नहीं है अपितु उसमें हृदय का भावात्मक योग भी लक्षित होता है–

'मैं तुमसे हूँ एक–एक है जैसे रश्मि प्रकाश
मैं तुमसे हूँ भिन्न–भिन्न ज्यों घन से तड़ित विलास।'

भाषा–शैली

महादेवी जी का कुछ प्रारंभिक कविताएँ ब्रजभाषा में हैं, किंतु बाद का संपूर्ण रचनाएँ खड़ी बोली में हुई हैं।

महादेवी जी की खड़ी बोली संस्कृत–मिश्रित है। वह मधुर कोमल और प्रवाह पूर्ण हैं। उसमें कहीं भी नीरसता और कर्कशता नहीं। वैसे महादेवी जी की भाषा सरल है, किंतु सूक्ष्म भावनाओं के चित्रण में वह संकेतात्मक होने के कारण कहीं–कहीं अस्पष्ट भी हो गई हैं। शब्द चयन अत्यंत सुंदर है, किंतु भाषा में कोमलता और मधुरता लाने के लिए कहीं–कहीं शब्दों का अंग–भंग अवश्य मिलता है। जैसे– आधार का अधार, अभिलाषाओं का अभिलाषें आदि। महादेवी जी की शैली में निरंतर विकास होता रहा है। 'नीहार' में उनकी शैली प्रारंभिक अवस्था में है। इस प्रारंभिक अवस्था की शैली में भाव कम हैं, शब्द अधिक। 'नीरजा' की शैली में भाव और भाषा की समानता है। 'दीपशिखा' की रचना में उनकी शैली प्रौढ़ हो गई है और थोड़े शब्दों में बहुत कुछ कहने की क्षमता आ गई है।

भावों को मूर्त रूप देने में महादेवी जी अत्यंत कुशल थीं। उन्होंने अपनी कविताओं में प्रतीकों और संकेतों का आश्रय अधिक लिया है। अतः उनकी शैली कहीं–कहीं कुछ जटिल और दुरूह हो गई है और पाठक को कविता का अर्थ समझने में कुछ परिश्रम करना पड़ता है।

कल्पना, भावना और पीड़ा

महादेवी जी की सृजन–प्रक्रिया विशुद्ध भावात्मक रही है। उनकी धारणाओं को युग के विभिन्न वाद परिवर्तित नहीं कर सके हैं। उन्होंने किसी एक दर्शन को केंद्र नहीं बनाया। जिसे जीवन अथवा समाज के लिए उपयुक्त समझा उसे आत्मसात कर लिया। महादेवी जी विशुद्ध रूप से भारतीय संस्कृति की पोषक होने के कारण उनकी समस्त काव्य कृतियों में उसका प्रभाव परिलक्षित होता है। वे छायावाद का मूल दर्शन सर्वात्मवाद को मानती है और प्रकृति को उसका साधन मानती हैं– 'छायावाद ने मनुष्य हृदय और प्रकृति के उस संबंध में प्राण डाल दिए जो प्राचीनकाल से बिंब प्रतिबिंब के रूप में चला आ रहा था, जिसके कारण मनुष्य को प्रकृति अपने दुःख में उदास और सुख में पुलकित जान पड़ती थी।' उन्होंने छायावाद का विवेचन करते हुए प्रकृति के साथ रागात्मक संबंध का प्रतिपादन विशेष रूप से किया है। इसके साथ ही उन्होंने सूक्ष्म या अंतर की सौंदर्य वृत्ति के उद्‌घाटन पर बल दिया है।

महादेवी की कविता अनुभूति से परिपूर्ण है, पंत और निराला की कवितायें दार्शनिकता के बोझ से दब–सी गई हैं, किंतु महादेवी जी के काव्य में ऐसी बात नहीं। उसमें दार्शनिकता होते हुए भी सरसता है। वह सर्वत्र भावना प्रधान है। महादेवी जी के काव्य में संगीतात्मकता का विशेष गुण है। वे गीत लेखिका हैं। गीतों की लय छंदों पर उनका अद्‌भुत अधिकार हर जगह दिखाई देता है। वे महादेवी माधुर्य भाव की उपासिका हैं। ब्रह्म को उन्होंने प्रियतम के रूप में देखा है। अपने प्रेमपात्र के लिए उन्होंने 'प्रिय' संबोधन दिया है। उनके गीत उज्ज्वल प्रेम के गीत हैं। इसके द्वारा अपने अंतर की जिस सात्विकता का उन्होंने परिचय दिया है वह उनकी काव्य–गरिमा का आधार स्तंभ है। जब जीवन में दिव्य प्रेम के मधु संगीत के रागिनी झंकृत हुई तब कवयित्री के मन में उसने असंख्य नए स्वप्नों को जन्म दिया–

'इन ललचाई आँखों पर पहरा था जब व्रीड़ा का
साम्राज्य मुझे दे डाला उस चितवन ने पीड़ा का।'

चिर तृषित आत्मा युग–युग से सर्वविश्वव्यापी परमात्मा से मिलन के लिए व्याकुल रही है। महादेवी जी की वेदनानुभूति

संकल्पात्मक अनुभूति की सहज अभिव्यक्ति है। 'मिलन का मत नाम लो, मैं विरह में चिर हूँ' कहकर वे इसी विरह को जीवन की साधना मानती है। उन्होंने पीड़ा की महत्ता ही घोषित नहीं की उसका सुखद पक्ष भी स्पष्ट किया है। उनके सुख का कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं हैं। जब दुःख अपनी अंतिम सीमा तक पहुँच जाता है तब वही दुःख सुख का रूप धारण कर लेता है।

'चिर ध्येय यही जलने का ठंडी विभूति हो जाना
है पीड़ा की सीमा यह दुख का चिर सुख हो जाना'

छायावादी कहे जाने वाले कवियों में महादेवी जी ही रहस्यवाद के भीतर रही हैं। उस अज्ञात प्रियतम के लिए वेदना ही उनके हृदय का भावकेन्द्र है जिससे अनेक प्रकार की भावनाएँ, छूट छूटकर झलक मारती रहती हैं। वेदना से इन्होंने अपना स्वाभाविक प्रेम व्यक्त किया है, उसी के साथ वे रहना चाहती हैं। उसके आगे मिलनसुख को भी वे कुछ नहीं गिनतीं। वे कहती हैं कि दृ मिलन का मत नाम ले मैं विरह में चिर हूँ। इस वेदना को लेकर इन्होंने हृदय की ऐसी अनुभूतियाँ सामने रखी हैं जो लोकोत्तर हैं। कहाँ तक वे वास्तविक अनुभूतियाँ हैं आर कहाँ तक अनुभूतियों की रमणीय कल्पना है, यह नहीं कहा जा सकता। एक पक्ष मे अनंत सुषमा, दूसरे पक्ष में अपार वेदना, विश्व के छोर हैं जिनके बीच उसकी अभिव्यक्ति होती हैकृ

यह दोनों दो ओरें थीं संसृति की चित्रपटी की
उस बिन मेरा दुख सूना मुझ बिन वह सुषमा फीकी।
पीड़ा का चसका इतना है कि कृ
तुमको पीड़ा में ढूँढ़ा तुममें ढूँढूगी पीड़ा।

वे दुःख को जीवन की स्फूर्ति तथा प्रेरणा तत्व मानती हैं। उनकी दृष्टि में वेदना का महत्व तीन कारणों से है– वह अंतःकरण को शुद्ध करती है। प्रिय को अधिक निकट लाती है और प्रियतम की शोभा भी उसी पर आधारित है। अतः उनके काव्य में दुःख के तीन रूप मिलते हैं निर्माणात्मक, करुणात्मक और साधनात्मक। वे बौद्धों के नैराश्यवाद को स्वीकार नहीं करतीं। उन्होंने दुःख को मधुर भाव के रूप में स्वीकार किया है जिसमें वह अलौकिक प्रिय के लिए दीप बनकर जलना चाहती है–

'मधुर–मधुर मेरे दीपक जल
युग–युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिपल, प्रियतम का पथ आलोकित कर।'

उनके अनुसार दुःख जीवन का ऐसा काव्य है जो समस्त विश्व को एक–सूत्र में बाँधने की क्षमता रखता है। उनका दुःख यष्टिपरक न होकर समष्टिपरक रहा है। उन्होंने कहा है व्यक्तिगत सुख विश्ववेदना में घुलकर जीवन को सार्थकता प्रदान करता है और व्यक्तिगत दुःख विश्व सुख में घुलकर जीवन को अमरत्व प्रदान करता है।उनका संदेश है–

'मेरे हँसते अधर नहीं, जग की आँसू लड़ियाँ देखो,
मेरे गीले पलक छुओ मत मुर्झाई कलियाँ देखो।'

महादेवी वर्मा के काव्य में रहस्यवादी चित्रण एवं अवस्थाएँ

जिज्ञासाः प्राचीन काल में आर्यों ने सम्पूर्ण सृष्टि में क्रियाशील प्राकृतिक शक्तियों को देवरूप में ग्रहण किया था। उन्होंने व्यक्त जगत के बीच अनेक रूपों और क्रियाओं में अभिव्यक्त प्राकृतिक शक्तियों की कल्पना एक समष्टि शक्ति के रूप में की थी। अतः स्वाभाविक रूप से उस परम शक्ति को जानने की इच्छा जागृत होती है।

प्रेम भावना

प्रेम भावना मानव की शाश्वत प्रवृत्ति है। यह अनादि काल से चली आ रही है और चलती रहेगी। छायावादी काव्य में भी प्रेमभावना का रूप दिखायी देता है। किन्तु उसमें न तो रीतियुगीन प्रणय–भावना की स्थापना है, और न द्विवेदीयुगीन इतिवृत्तात्मकता। द्विवेदी युग में श्रृंगार रस के विरोध में जो जिहाद चला, उसने बाह्य और आन्तरिक प्रेम के बहुत से अंशों को अस्पृश्य बना दिया। श्री शोभा का नाम लेना ही अपराध हो गया था। 23 फलतः साहित्य में शक्तिहीन करुण भावुकता के राग अलापे जाने लगे। द्विवेदी–युग के कवियों ने कविता के साथ न्याय नहीं किया। उनकी अतित्रय अकमवृत्तात्मक कविता सीधे हृदय से उद्भूत न होकर बुद्धि की वीथियों में चक्कर काटती हुई आगे बढ़ती थी। 24 परिणामतः कविता श्रृंगार के अभाव में नीरस हो गयी और उसका हृदय पक्ष दब गया। प्रेमभावना मानव हृदय की स्वाभाविक भूख है। यह सर्वथा लौकिक और श्रृंगारिक है। इसमें रति की प्रमुखता होती है। मनुष्य की वंश परम्परा इसी रति–भाव के कारण अक्षुण्य बनी रहती है तथा क्षणिक तृप्ति भी हो जाती है। 25 आदिकाल में स्त्री–पुरुष के यौन–सम्बन्ध आज से काफी भिन्न थे। सभ्यता के विकास के साथ ही प्रेम के आदर्शवादी रूप की प्रतिष्ठा हुई और विवाह–प्रथा के द्वारा पति–पत्नी में प्रणय–सम्बन्ध स्थापित हुआ। कोरा कायिक प्रेम तो बर्बर युग की वस्तु है। उसका मानसिक और सांस्कृतिक प्रतिकार प्रत्येक युग में अपने–अपने अनुसार हुआ है। 26 साहित्य में सभी समयों में इसका उल्लेख हुआ है। यह दूसरी बात है कि किसी युग में इसकी धूम मची हो, और किसी युग में निषेध किया गया हो।

विरह वेदना

वेदना भारत के लिए कोई नवीन दर्शन नहीं है। वैदिक युग के बाद से यहाँ दुःखवाद का प्रचार–प्रसार दिखायी देता है। औपनिषदिक ऋषि ने लक्षित किया है कि संसार घृणा के योग्य है, क्योंकि इसमें क्षणमात्र के लिए सुख नहीं है। यह दुःखों से आवृत है जिसमें जीव घंटीयंत्र की भांति ऊपर–नीचे अहर्निश घूमता रहता है। 27 बौद्ध दर्शन के अनुसार दुःख ही आर्य सत्य है। जन्म में दुःख है, जरा में दुःख है, व्याधि में दुःख है, मरण में दुःख है, अप्रिय वस्तु के संयोग तथा प्रिय वस्तु के वियोग में भी दुःख है। 28 महाभारतकार के अनुसार इस संसार में सुख की अपेक्षा दुःख का आधिक्य है। 29 गीता में भी मानव जीवन को अशाश्वत और दुःखों का आलय 30 तथा अनित्य सुख–रहित कहा गया है। 31 अन्तिम दुःखद परिभाषा के कारण अन्त में सुख के निष्ट हो जाने के विचार से विवेकियों को प्रत्येक वस्तु दुःखदायी ज्ञात होती है। 32 जीवन की इस दुःखस्वरूपता के कारण उसका सर्वत्र प्रखार दिखायी देता है। 33

साहित्य में यही दुःखवाद "वेदनानुभूति" की संज्ञा से अभिहित हुआ है। जीवन और जगत् पर इसकी छाया प्रारम्भ से चली आ रही है और आज भी किसी–न–किसी रूप में दृष्टिगोचर होती है। अतः वेदनानुभूति की व्यापकता भारतीय जीवन–दर्शन का प्रमुख आधार है। छायावाद–युग में सर्वत्र वेदनानुभूति की तीव्रता विद्यमान है। इस वेदना का मानव जीवन में इतना महत्व है जितना कि आनन्द का। 34 मनुष्य अपने सभी कार्य सुख प्राप्ति के लिए करता है, किन्तु दुःख उसका पीछा नहीं छोड़ता है। इसलिए उसे जीवन में

वेदना और निराशा का सामना करना पड़ता है। छायावादी काव्यधारा की यह वेदनानुभूति कवियों की वैयक्तिकता और संवेदनशीलता का परिणाम है। इसके साथ ही उस काल की

कुण्ठा, क्षोभ, अभाव तथा सामाजिक विषमता का भी पूर्ण रूप से प्रभाव लक्षित होता है। 35

आत्मसमर्पण

आत्मसमर्पण की दृष्टि से महादेवी का समूचा काव्य अप्रतिम हो गया है। छायावादी कविता में करुणा, प्रेम, सौन्दर्य, मानवतावाद, नारी उत्थान की भावना, दीन–दुखियों के प्रति सहानुभूति की अभिव्यक्ति तथा छुआछूत, ऊँच–नीच, अमीर–गरीब का भेदभाव मिटाकर सभी को समान रूप से देखने की जो नयी दृष्टि है,

वही जीवन के बदलते हुए मूल्यों की अभिव्यक्ति है। छायावादी कवियों ने परम्परावादी मूल्यों को पहली बार चुनौती देकर उन्हें अस्वीकार किया। इस सम्बन्ध में डॉ. शम्भूनाथ सिंह का कथन है कि – "सामाजिक सम्बन्धों का आधार वैषम्य होने से समाज के प्रति अनास्था का होना स्वाभाविक है। इस अनास्था और

असन्तोष के कारण कवि को इस बात के लिए विवश होना पड़ता है कि या तो वह विद्रोह बनकर समाज में प्रचलित मान्यताओं और मूल्यों का विरोध करे और पुराने मानदण्डों को तोड़कर नये मानदण्डों के निर्माण में योग दे या उन मान्यताओं को न मानते हुए भी जीवन में उनसे बँधा रहे और अतृप्ति, भूख तथा निगूढ़ और निष्क्रिय कामना लेकर कल्पना–लोक का सृजन करें।" 36

करुणा एवं लोक मंगल की कामना

महादेवी के काव्यों में मानवीय करुणा का सागर असीम और अगाध है। वैयक्तिक धरातल पर लोक जीवन के मूल्यों का सहज स्पर्श है। महादेवी के साहित्य में मानवमूल्य विषयक जो शक्ति है वह लोक जीवन की इसी चेतना की पहचान की शक्ति है। गीतों, निबन्धों, रेखाचित्र और संस्मरणों के नये प्रयोग की ओर संकेत करके महादेवी जी ने मानव मूल्य की पारम्परिक संवेदना के वाहक के साथ–साथ नयी चेतना का भी वाहक बनाया। स्त्री प्रसंग के अन्तर्गत उन्होंने नारी शोषण का पर्दाफाश किया है।

सांसारिक और आध्यात्मिक स्तर पर करुणा की देवी महादेवी की विशिष्ट विचारधाराएँ विकसित हुई। उन्होंने समाज सापेक्ष स्थिति और सहित्य सृजन के सामाजिक उपयोगिता पर विशेष ध्यान दिया। अपने अन्तः प्रेरणाओं से महादेवी जी ने देवी सरस्वती की विधायिनी शक्ति के रूप में मानव के अज्ञात लोक में पदार्पण की और अपने साहित्य चिन्तन को रहस्यात्मक धरातल पर मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा की। इस संबंध में महादेवी जी ने सामाजिक और साहित्यिक सागर की अतल गहराई तक उतरकर मानवीय वृत्तियों को सुसंस्कृत किया। उनकी वृत्तियों को परिष्कृत किया। साथ ही मानव के दायित्व भावना को सचेष्ट बनाया।

कवयित्री महादेवी के काव्य में करुणा और लोकमंगल की कामना कवि की गहरी संवेदना, अध्ययन और चिन्तन का परिणाम था। समाज के प्रति गहरी सहानुभूति और युगदर्शन का इतना महान व्याख्याता हिन्दी साहित्य में शायद ही कोई दूसरा होगा। असहाय वर्ग के प्रति गहरी सहानुभूति दिखाकर महादेवी ने मनुष्य को मनुष्य समझाने तथा उसे समान अधिकार दिलाने का सराहनीय प्रयास किया। उन्हीं के शब्दों में – "जो जाग चुका है वह अधिक समय तक सोते हुए का अभिनय नहीं करता रह सकता है।

हमारी जागृति बहनों में से कुछ ने विद्रोह आरम्भ कर दिया है और कुछ उसके लिए सुयोग ढूँढ़ रहे हैं जो देश के भावी नागरिकों के विधाता हैं, उनके प्रथम और परम गुरु हैं जो जन्मभर अपने आपको मिटाकर दूसरों को बनाती रहती है, वे केवल तभी तक आदरहीन मातृत्व तथा अधिकार शून्य पत्नीत्व स्वीकार करती रह सकेगी, जब तक उन्हें अपनी शक्तियों का बोध नहीं होता। बोध होने पर वे बन्दिनी बनाने वाली श्रृंखलाओं को स्वयं तोड़ फेकेंगी परन्तु उस दशा में अशान्ति और संघर्ष अवश्यम्भावी है जिसके कारण बहुत समय तक समाज की सुचारू व्यवस्था होनी कठिन हो जावेगी। अतः सामाजिक अधिकारों का फिर से निरीक्षण तथा उनमें समय के प्रतिकूल परिस्थितियों को दूर करने का प्रयास ही भविष्य के लिए श्रेयष्कर हो सकेगा।

निष्कर्ष

महादेवी वर्मा को छायावाद युग के सबसे प्रमुख रचनाकारों में गिना जाता है। छायावाद हिन्दी साहित्य का वह युग है जब प्रेम, प्रकृति और आत्मसात रचनायें अपने समय का प्रतिनिधित्व कर रहीं थीं। महादेवी वर्मा की रचनाओं में भी छायावाद एक अव्यक्त प्रेम की तरह अन्तर्निहित दिखाई पड़ता है। रचनाकार होने के साथ साथ एक नारी का प्रेम के प्रति दृष्टिकोण भी बहुत स्पष्ट रुप से दिखाई देता है। किन्तु नारी का जीवन हर आयु में अलग चरित्रों को निभाते हुए बीतता है। कभी वह बेटी है, कभी सखी, कभी प्रेमिका है और कभी माँ। परंतु इन सब जिम्मेदारियों को निभाते हुए वह एक दीप की भाँति जलती है जो प्रकाशित करती है उन सबका जीवन जो उसके सम्पर्क में आतें हैं। कवियों ने अशेष प्रवृत्ति के साथ परमसत्ता का सम्बन्ध स्थापित किया तथा इस सार्वभौमिक भावना को काव्यात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की। इससे प्राचीन मान्यताओं में लिपटे हुए मन को उन्मुक्त असीम वातावरण मिला, विश्वजनीन मानवता का उत्कर्ष हुआ, स्थूल तथ्यों का भेदन हुआ, जीवन–सत्य को देखने की प्रेरणा मिली तथा अनुभूति के क्षणों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण हुआ। सामाजिक आधार की दृष्टि से भी छायावादी कवियों का रहस्यवाद मध्ययुगीन सन्तों के रहस्यवाद से लोकप्रिय प्रतीत होता है। इसमें सन्तों का द्रविड़ प्राणायाम न होकर जीवन, जगत् तथा ईश्वर को नये रूप में देखने की जिज्ञासा विद्यमान है। कुल मिलाकर छायावादी काव्यधारा की रहस्यवादी भावना चिरन्तन, मौलिक, नवीन, मनोवैज्ञानिक तथा विशिष्ट है। प्रगतिवाद के प्रति आरम्भ में जितनी ललक कवियों की रही, उतनी उपन्यासकारों की नहीं। उपन्यासकारों के लिए संदेश बहुत नया नहीं था क्योंकि उपन्यास का जन्म सामाजिक यथार्थ को लेकर हुआ था। यही वजह है कि 'प्रगतिशील लेखक संघ' के अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए प्रेमचन्द ने कहा कि लेखक स्वभावतः प्रगतिशील होता है, इसलिये 'प्रगतिशील लेखक संघ' में प्रगतिशील शब्द अनावश्यक है। स्पष्ट है कि छायावादी कवि प्रकृति के रहस्यपूर्ण संकेतों को देखकर जिज्ञासा से भर उठते हैं। प्रकृति के कण–कण में समायी हुई अनिर्वचनीय सत्ता को वे खोजने का प्रयास भी करते हैं। उनकी यह प्रवृत्ति वेदों तथा उपनिषदों में प्राप्त जिज्ञासा की भावना से सम्बन्ध रखती है। संक्षिप्त रूप में यह कहा जा सकता है कि वेदनानुभूति छायावादी साहित्य का प्रधान जीवन–दर्शन है। जगत् तथा जीवन की निस्सारता से व्यथित होकर छायावादी कवियों ने दुःखवाद का सृजन किया। उन पर महात्मा बुद्ध के "सर्व दुःखस" की भावना का प्रत्यक्ष प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। इसके साथ ही छायावादी कवियों का व्यक्तिगत सुख–दुख भी उसके प्रति उत्तरदायी हैं। उनकी यह वेदनानुभूति मानव जीवन को निष्क्रिय न बनाकर उसमें आशा का संचार करने तथा विषय परिस्थितियों से संघर्ष करने की प्रेरणा देती है। वस्तुतः छायावादी कवियों की वेदना और करुणा विश्वप्रेम तथा मानवता का रूप ग्रहणकर जीवन को नयी दिशा तथा अभिव्यक्ति देने में सर्वथा सक्षम है।

सन्दर्भ

1. अतीत के चलचित्र, पृष्ठ 15, 16, महादेवी वर्मा।
2. आधुनिक हिन्दी गीतिकाव्य का स्वरूप और विकास, पृष्ठ 149, डॉ. आशा किशोर।
3. आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ–डॉ. नामवर सिंह, पृष्ठ 50।
4. काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध – जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ

39।
5. कवि और काव्य – शान्तिप्रिय द्विवेदी, पृष्ठ 151।
6. आधुनिक साहित्य – नन्ददुलारे बाजपेयी, पृष्ठ 371।
7. काव्य की भूमिका – दिनकर, पृष्ठ 40।
8. हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ – डॉ. जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल, पृष्ठ 541।
9. आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ–डॉ. नगेन्द्र, पृष्ठ 13।
10. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 330, आचार्य दुर्गाशंकर मिश्र।
11. लहर, पृष्ठ 16, जयशंकर प्रसाद।
12. कामायनी, पृष्ठ 24–25, जयशंकर प्रसाद।
13. संस्कृति और साहित्य, पृष्ठ 35, डॉ. रामविलास शर्मा.।
14. दीपशिखा, पृष्ठ 53, महादेवी वर्मा।
15. छायावाद युग, पृष्ठ 65, डॉ. शम्भूनाथ सिंह।
16. छायावाद का पतन, पृष्ठ 119, डॉ. देवराज।
17. छायावादी कवियों का सांस्कृति दृष्टिकोण, पृष्ठ 387, डॉ. प्रमोद सिन्हा।
18. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 550, डॉ. नगेन्द्र।
19. महादेवीः आस्था और अन्य निबन्ध, पृष्ठ 26, महादेवी वर्मा।
20. महादेवीः नया मूल्यांकन, पृष्ठ 65, डॉ. गणपति चन्द्र गुप्त।
21. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 116, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।
22. महादेवी का विवेचनात्मक गद्य, पृष्ठ 217, महादेवी वर्मा।
23. जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 76, नन्ददुलारे बाजपेयी।
24. आधुनिक हिन्दी कविता में गीति–तत्व, पृष्ठ 303, डॉ. सच्चिदानन्द तिवारी।
25. छायावाद युग, पृष्ठ 78, डॉ. शम्भूनाथ सिंह।
26. जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ–23–25, नन्ददुलारे बाजपेयी।
27. सुखाद्बहुतरं दुःखं जीविते नास्ति संशयः – महाभारत, शान्तिपर्व, 205/6।
28. छायावाद युग, पृष्ठ 72, डॉ. शम्भूनाथ सिंह।
29. आधुनिक हिन्दी गीतिकाव्य का स्वरूप और विकास, पृष्ठ 154, डॉ. आशा किशोर।
30. छायावाद युग, पृष्ठ 64, डॉ. शम्भूनाथ सिंह।

Creative Commons (CC) License
This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.